RJPP, Vol. 14, No. 2, 2016
ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

RJPP
REVIEW JOURNAL OF
POLITICAL PHILOSOPHY
A Peer Reviewed International Journal

जलवायु परिवर्तन से संघर्ष : वित्तीयन का मुद्दा

डॉ0 राजेश कुमार*
पी.एच.डी.,जे.आर.एफ.
डिपार्टमेंट ऑफ पॉलिटिकल साइंस,
फैकल्टी ऑफ सोशल साइंसेज,
बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी, वाराणसी–221005
Email: rajeshyadav.mcprbhu@gmail.com

सारांश

''विकास के नाम पर होने वाला अंधाधुंध औद्योगीकरण आज पृथ्वी के अस्तिव को गंभीर चुनौती दे रहा है। पूँजी संचय के लिए होने वाले तीव्र औद्योगीकरण की देन वातावरण में ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन वायुमंडल के लिए खतरा बन रहा है और यही खतरा पृथ्वी के पर्यावरण की तबाही का कारण है। तीव्र औद्योगीकरण से होने वाली ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के कारण धरती के तापमान में दो डिग्री सेल्सियस की बढ़ोत्तरी हो चुकी है और विकास की वर्तमान रफ्तार के अनुसार सदी के अन्त तक इसमें एक से साढ़े पाँच डिग्री सेल्सियस तक की बढ़ोत्तरी का अनुमान है। ऐसा नहीं है कि इस भयंकर वैश्विक खतरे से दुनिया अनजान है, दुनिया के तमाम वैज्ञानिकों, सरकारों, सरकारी तथा गैर–सरकारी संस्थाओं तथा जागरूक नागरिकों में पर्यावरण के खतरे के प्रति चिंता है किन्तु पिघलते ग्लेशियर, उफनते समुद्र, बदलते मौसम और गर्म होती वसुंधरा जहाँ चिंता का विषय है, वहीं विकसित दुनिया की राजनीति पूरी तरह अपने आर्थिक हितों को साधने की कूटनीतिक चालों में व्यस्त है। अभी तक इस नीले ग्रह को बचाने के प्रयासों में जीत पूँजी संचय के कूटनीतिक इरादों की ही हो रही है। दुनिया के ज्यादातर देश यह समझते हैं कि जलवायु परिवर्तन से निपटने का मतलब है अपनी अर्थव्यवस्था को भारी नुकसान पहुँचाना। क्योंकि प्रदूषण रोकने के लिए सभी निर्धारित मानकों को पूरा करना आसान हीं है। अर्थात इसका सीधा सा अर्थ यही है कि यह काम अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुँचाकर ही करना पड़ेगा। विकसित औद्योगिक देश विकासशील व अल्पविकसित देशों को पर्यावरण संघर्ष से लड़ने के लिए न तो तकनीकी का हस्तांतरण कर रहे हैं और न ही प्रदूषण से लड़ने के लिए यूएनएफसीसीसी द्वारा बनाये गये आर्थिक फंड में सहायता ही कर रहे हैं। पर्यावरणीय समस्याओं के हल हेतु आयोजित विभिन्न सम्मेलनों में थोड़ी बहुत बात बनती भी दिखती है तो विकसित देश अपने हितों की पूर्ति कार्बन क्रेडिट व कार्बन ट्रेडिंग के माध्यम से कर लेते हैं। मसलन पूरी की पूरी पर्यावरणीय बहस वित्तीयन पर आकर टिक गयी है। ऐसे में पर्यावरण और पारिस्थितिकी के जुड़े मुद्दे वास्तव में काफी जटिल और उलझाने वाले हैं। हालाँकि कुछ देश अब जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को शिद्दत से महसूस करने लगे हैं।

जिनको इसका प्रत्यक्ष अनुभव नहीं है वे दूसरों की स्थिति को देखकर डरे हुए हैं। नतीजतन, कुछ तो अब औद्योगीकरण से तौबा करने की सोच रहे हैं तो कुछ का कहना है कि कम विकास कर लेंगे, लेकिन हम खुश रहेंगे। फिर भी कुछ देश अभी भी जलवायु परिवर्तन के नाम पर ज्यादा कुछ करने के मूड में नहीं हैं तथा वे अभी भी अर्थव्यवस्था का बोझ एक–दूसरे के कंधे पर डालने के लिए प्रयासरत हैं।"

की वर्ड्स (Key Words) :– तीव्र औद्योगीकरण, जलवायु परिवर्तन, पर्यावरणीय प्रदूषण, जलवायु वित्तीयन, तकनीकी हस्तांतरण, पर्यावरणीय चुनौती, जलवायु अनुकूलन व शमन।

प्रस्तावना

गाँधी जी ने बीसवीं सदी के पूर्वाद्ध में ही जब यह कहा था कि, प्रकृति सभी की जरूरतें पूरी करने में सक्षम है, पर किसी की लालच को पूरा करने के लिए नहीं, तब 21वीं सदी के पूर्वाद्ध जैसे पर्यावरणीय हालात नहीं थे। यही कारण थे कि उस समय उनके कथन पर किसी ने इतनी गहराई से गौर नहीं किया, लेकिन आज हालात उलट चुके हैं। अब किसी के कथन पर गौर करने की बजाय जलवायु परिवर्तन के खिलाफ सीधे कार्रवाई का समय है। हालात इतने बदतर हो चुके हैं कि प्रकृति के हर रूप में प्रदूषण घुसपैठ कर चुका है। पर मुश्किल यही है कि मानव का अब भी लालच से मोहभंग नहीं हुआ है। क्योंकि जिन देशों में 18वीं शताब्दी के औद्योगिक क्रांतियों का असर शुरू हो चुका था, उन्हें पर्यावरण से छेड़छाड़ का नतीजा ज्ञात तो था, लेकिन वे चुप रहे। यही उनकी स्वार्थपरक सोच थी कि नुकसान तो सबका हो रहा है, लेकिन विकास केवल उनका हो रहा है। इसलिए नुकसान के बारे में दुनिया सोचे, विकास के बारे में तो वे सोच ही रहे हैं। अपनी इसी सोच के तहत उन्होंने पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने का उनका क्रम जारी रखा। शायद उन्हें यही लगता था कि समृद्धि और आर्थिक वृद्धि ही सारी समस्याओं के समाधान की जड है, लेकिन इसके लिए विकास से ज्यादा विनाश का विकराल रूप हमारे सामने है, अब उन्हें यह भी अहसास होने लगा है।

विकास एक व्यापक संकल्पना है और पर्यावरण के साथ उसका जटिल एवं परिवर्तनीय संबंध है। औद्योगिक और तकनीकी प्रगति के साथ विकास की परिभाषा और पर्यावरण की चिंता महत्वपूर्ण होती जा रही है। मनुष्य की पर्यावरण के साथ भूमिका दोतरफा होती है, अर्थात् एक तरफ जहाँ मनुष्य भौतिक पर्यावरण के अजैविक संघटक का एक महत्वपूर्ण भाग है वहीं दूसरी तरफ वह पर्यावरण का एक महत्वपूर्ण कारक भी रहा है। वह प्राकृतिक पर्यावरण तंत्र को विभिन्न हैसियत से विभिन्न रूपों में प्रभावित करता रहा है। विकास की प्रक्रिया में समाज तथा उसकी संस्कृति के विकास के साथ उसकी बुद्धि, उसका कौशल तथा उसकी प्रौद्योगिकी भी विकसित होती गयी, जिससे पर्यावरण के साथ उसकी भूमिका तथा सम्बन्ध में भी उत्तरोत्तर परिवर्तन होता गया। जो मनुष्य प्रारम्भ में प्रकृति का अंग तथा साझीदार था वही आगे चलकर उसका मालिक बन बैठा। अनियंत्रित व असंतुलित विकास के रास्ते हमारा पर्यावरण तथा उसके साथ मानव सहभागिता इतनी अधिक चरमरा गयी कि उसने हमारे पूरे परिवेश को बदलकर रख दिया। विकास के नाम

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

पर विवेकहीन व भौतिकतावादी फिजूल खर्ची ने पूरे विश्व में पारिस्थितिकीय प्रक्रिया को गंभीरता से प्रभावित किया है।

आज से तकरीबन सत्तर–अस्सी वर्ष पहले विकास का मतलब बाँधों का निर्माण करके बिजली का उत्पादन करना था किन्तु आज विकास का अर्थ बाँध बनाने की वजह से विस्थापित हुए लोगों का पुनर्वास करना है। यह पर्यावरण के प्रति दुनिया की गहरी चिंता को व्यक्त करती है। आज हम सिर्फ विकास को अपना लक्ष्य नहीं बनाते बल्कि सतत् व संपोषणीय विकास (Sustainable Development) के व्यापक उद्देश्य का अनुसरण करते हैं। 'ह्यूमन डेवलपमेंट इंडेक्स' (HDI) भी विकास को जिस वस्तुनिष्ठ पैमाने पर मापता है, उसमें जीवन–प्रत्याशा अनिवार्य रूप से जल तथा प्राकृतिक संसाधनों से जुड़ी हुई हैं और यह सब एक ऐसे विकास तक पहुँचने की कोशिश को रूपायित करते हैं जहाँ पर्यावरण का संरक्षण किया जा सके। पर्यावरण जैवमंडल का आधार है किन्तु आज तीव्र औद्योगीकरण एवं आर्थिक विकास रूपी इंजन से निकली कालिख ने इंसान के घर का क्या हाल किया है, इसके सबूत अब साफ नजर आने लगे हैं। पिघलते ग्लेशियर सिकुड़ती धरती और बढ़ती गर्मी पूरी धमक के साथ अपनी मौजूदगी दर्ज कराने लगी है। जलवायु परिवर्तन के कारण पर्यावरणीय संकट का सामना कर रही समूची दुनिया के कारण चाहे जो भी रहे हों इस बात में संदेह नहीं कि पृथ्वी पर विजय प्राप्त करने की अपनी लालसा के कारण हम जीवाश्म ईंधनों का उपयोग, नदियों और भू–गर्भीय जल के दोहन, ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन और इसी प्रकार के अन्य संकेतकों के अत्यधिक दोहन के खतरनाक कगार पर खड़े हुए हैं।

पर्यावरण पर विकास का बढ़ता दबाव

पर्यावरणीय एवं पारिस्थितिकीय परिवर्तनों के कारण उत्पन्न पर्यावरण संकट मनुष्य द्वारा किये गये तीव्र अनियंत्रित विकास के फलस्वरूप जहाँ एक ओर विभिन्न राष्ट्रों ने सामाजिक, आर्थिक, वैज्ञानिक व प्रौद्योगिक विकास किये हैं वहीं दूसरी ओर उनके कारण विकट पर्यावरणीय समस्यायें भी उत्पन्न हुई हैं। पर्यावरण एवं विकास के बदलते असंतुलन ने आम आदमी का जीवन इतना अधिक दुष्प्रभावित किया है कि वर्तमान परिदृश्य में सर्वत्र पर्यावरण की गुणवत्ता, पारिस्थितिकी तंत्र के विघटन एवं विनाश तथा प्राकृतिक संसाधनों की निरंतर होती कमी के कारण धरती के अस्तित्व को चुनौती मिलती जा रही है।

विकास के नाम पर होने वाला अंधाधुंध औद्योगीकरण, वन–विनाश की बढ़ती प्रवृत्ति जिससे पर्यावरण की स्थिरता तथा पारिस्थितिकीय सन्तुलन का निर्माण होता है, तीव्र जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, आधुनिक विनाशकारी प्रौद्योगिकी का विकास, अधिक अन्न उत्पादन हेतु बड़े पैमानें पर रसायनों व रासायनिक ऊर्वरकों का प्रयोग, जल संसाधनों का विनाश, भौतिकतावादी व बाजारीकरण पर आधारित

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

मानवीय जीवन शैली, आर्थिक प्रगति की रफ्तार को बढ़ाने के उद्देश्य से किया जाने वाला औद्योगिक विकास, जीवाश्म ईंधनों (Fossil Fuel) का बड़े स्तर पर प्रयोग, नाभिकीय कुप्रबंधन तथा प्राकृतिक संसाधनों का असमान वितरण और अपर्याप्त सामाजिक–आर्थिक विकास आदि कुछ ऐसे कारण हैं, जिनसे आज इस खूबसूरत नीले ग्रह के अस्तित्व को चुनौती मिल रही है। पूँजी संचय व विलासिता पूर्ण जीवन जीने के लिए मनुष्य ने पर्यावरण का विकास के नाम पर इतना अधिक परिवर्तन कर दिया है कि अब उनके कारण कई गंभीर पर्यावरणीय समस्यायें अपना तांडवी रूप दिखा रही हैं। जलवायु परिवर्तन व ग्लोबल वार्मिंग की घटनायें, ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन में वृद्धि, संक्रामक व संचरणशील बीमारियों का खतरा, जल संकट, बर्फ छत्रकों का पिघलना तथा द्वीपीय व तटवर्ती देशों के डूबने का निरंतर बन रहा खतरा, अम्लवृष्टि, मरूस्थलीकरण, अस्थिर वर्षा दर, मैंग्रोव (कच्छ वनस्पतियों), नम भूमि और पारिस्थितिकी तंत्र पर प्रभाव वायु प्रदूषण तथा मौसम प्रतिरूपों में बदलाव आदि की घटनायें आम हो चली हैं। दरअसल, कुछ पर्यावरण इतने अधिक खतरनाक साबित हो रहे हैं कि मनुष्य द्वारा उन्हें नियंत्रित कर पाना असंभव दिख रहा है। यह औद्योगिक व विकासशील दोनों देशों पर लागू होता है क्योंकि पर्यावरण एक ऐसा विषय है जो वास्तव में मानचित्र पर उकेरी गयी सीमाओं के अनुसार नहीं चलता। पर्यावरण को नष्ट किये बिना 'अनवरत विकास' का प्रादर्श ढूँढ़ने में अनेक राष्ट्रों को आज संघर्ष करना पड़ रहा है। पर्यावरण मुद्दों की सार्वभौमिक प्रकृति के बावजूद, जब विभिन्न देशों द्वारा छोड़े गये 'कार्बन फुटप्रिंट्स' के समान वितरण का प्रश्न उठता है तो प्रति व्यक्ति उत्सर्जन और कुल उत्सर्जन दृष्टिकोण के बीच बहस और अधिक जटिल विवाद का विषय बन जाती है। अन्तर्राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन चर्चाओं में यह बात और भी महत्वपूर्ण ढंग से उजागर होती है कि कुल कार्बन उत्सर्जन में विकसित पश्चिमी देशों का योगदान 50 फीसदी से भी अधिक है। किसी विकासशील देश को इस बात के लिए राजी करना कठिन होता है कि पर्यावरण के नाम पर वह अपने नागरिकों के जीवन स्तर में सुधार लाने के लिए कारखानों और उद्योगों के निवेश न करें।

Annual Green House Gas Emissions by sector

Power Stations	21.3%
Industrial Processes	16.8%
Transportation Fuels	14.0%
Agricultural By Products	12.5%
Fossil Fuel Retrieval, Processing and Distribution	11.3%

Residential, Commercial And other Sources	10.3%
Land Use And Biomass Burning	10.0%
Waste Disposal And Treatment	3.4%

Source:-

http://en.wikipedia.org/wiki/greenhouse_gas#/media/file:greenhouse_gas_by_sector.org-

पर्यावरण एवं विकास से जुड़े मुद्दे वास्तव में काफी जटिल और उलझाने वाले हैं। मौजूदा आर्थिक ढाँचे से लेकर हमारी उपभोग की आदतें, प्राकृतिक संसाधनों पर जनजातीय अधिकार से लेकर आर्थिक विकास, मानव मात्र के साझे पर्यावरणीय संसाधन बनाम राष्ट्रीय प्राथमिकताएं ऐसी कुछ दुविधाएं हैं, जिनके बारे में आम सहमति बननी सरल नहीं है। वास्तव में पर्यावरणीय मुद्दों के समाधान का सारा दाँव पेंच फँस रहा है कीमत पर, क्योंकि विकसित देश जहाँ पर्यावरण संरक्षण के मामले में खर्च को बाँटना चाहते हैं वहीं भारत व चीन सहित अन्य विकासशील देश इसकी जिम्मेदारी का पूरा खर्च उठाने का दायित्व विकसित देशों के हिस्से में डालना चाहते हैं। बर्ल्ड बैंक के एक आँकलन के मुताबिक पर्यावरण को अब तक हुए नुकसान को यदि पलटना है तो दुनिया को अपनी आर्थिक विकास दर का तकरीबन 5 फीसदी हिस्सा प्रदूषण मुक्त तकनीकों और संरक्षण प्रयासों के नाम करना होगा। विकासशील देश इस बात से आशंकित हैं कि कहीं प्रदूषण मुक्त तकनीकों के नाम पर टेक–ऑफ कर रही उनकी अर्थव्यवस्थाओं के पर न कतर दिये जाँय। हालाँकि पर्यावरण से हुए नुकसान का खामियाजा विकसित एवं विकासशील दोनों देशों को उठाना पड़ रहा है। सुनामी, हरिकेन, कैटरीना, रीटा, बिल्मा, फेलिन जैसी उष्ण कटिबंधीय चक्रवातों की विश्व के विभिन्न भागों में आवृत्ति की घटनायें इस बात की प्रमाण हैं। चेरनोविल दुर्घटना (यूक्रेन), भोपाल गैस दुर्घटना (भारत), फुकुशिमा संयंत्र दुर्घटना (जापान) तथा दिल्ली पेट्रोलियम गैस दुर्घटना पर्यावरण क्षति के ऐसे उदाहरण पेश करते हैं जिसे कुछ बड़े औद्योगिक घरानों तथा मानवीय लापरवाही की मिसाल के तौर पर पेश किया जा सकता है। विश्व के कई देशों में तकनीकी और संसाधनों के स्तर पर उनमें प्रबंधन की क्षमता काफी हद तक कठोरता से सीमित है। विकासशील देशों की अपने औद्योगिक संयंत्रों के लिए विकसित देशों तथा अन्य विकासशील देशों से आयातित की गयी प्रौद्योगिकी द्वारा विकास की खोज प्रायः उन्हें एक नयी आपदा की ओर मोड़ देती है। 3 दिसम्बर, 1984 को भोपाल के यूनियन कार्बाइड संयंत्र में मिथाइल आइसोसाइनाइट (MIC) गैस के रिसाव तथा यूक्रेन के चेरनोबिल दुर्घटना से इस तर्क की पुष्टि होती है जहाँ कई हजार लोग बेघर हुए। भोपाल गैस त्रासदी ने कई विकासशील देशों को विकास के नाम पर फिजूल खर्ची करके बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को अपने यहाँ बिना पर्याप्त सुरक्षा मानकों के खतरनाक संयंत्र

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

लगाने की अनुमति देने की प्रक्रिया को गहरा धक्का पहुँचाया है। इस घटना के कारण लोगों का व्यापक पैमाने पर विस्थापन हुआ और दीर्घकालीन वातावरण संकट उत्पन्न हुआ।

हालाँकि कुछ देश अब जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को शिद्दत से महसूस करने लगे हैं। जिनको इसका प्रत्यक्ष अनुभव नहीं है वे दूसरों की स्थिति को देखकर डरे हुए हैं। नतीजतन कुछ तो अब औद्योगीकरण से तौबा करने की सोच रहे हैं तो कुछ का कहना है कि कम विकास कर लेंगे, लेकिन हम खुश रहेंगे। कई एक देशों में तो लोग रहवास के लिए प्रदूषण रहित जोन को प्राथमिकता देने लगे हैं। आखिर इन सब की जरूरत क्यों पड़ी और क्या है वास्तविक समस्या, क्या है इसका समाधान और क्या हो रहे हैं प्रयास तथा प्रयासों का क्या रहा नतीजा ? इन सब चीजों को प्रस्तुत करने का प्रयास इस लेख में किया गया है।

क्या है समस्या अथवा समस्या की जड़

प्रगति के रथ पर सवार होकर वैश्विक समुदाय के कई देश जितनी तेजी से आगे बढ़ रहे हैं, तब शायद उन्हें यह आभास नहीं था कि उतनी ही तेजी से वे उस खतरे के करीब जा रहे हैं। अब तो यह खतरा इस कदर सिर उठाकर खड़ा हो चुका है कि उसका समाधान किये बगैर आगे बढ़ना मुश्किल हो गया है। आखिर क्या है यह खतरा, इसे जानने के लिए पर्यावरण के बारे में जानना जरूरी है। दरअसल, पर्यावरण उन सभी भौतिक, रासायनिक एवं जैविक कारकों की एक समग्र इकाई है जिससे जीवधारी अथवा पारितंत्रीय आबादी प्रभावित होती है। इतना ही नहीं यही समग्र इकाई उनके रूप, जीवन और जीविता को भी तय करती है। मतलब यह कि मानव जीवन को प्रभावित करने वाले सभी जैविक और अजैविक तत्वों, तथ्यों, प्रक्रियाओं और घटनाओं की समग्रता से यह इकाई निर्मित है, जो हमारे चारों ओर व्याप्त है और मानव जीवन की प्रत्येक घटना इसके दायरे में संपन्न होती है।

इसे विपरीत प्रक्रिया में देखें तो हम मनुष्य भी अपने समस्त क्रिया कलापों द्वारा इस पर्यावरण को प्रभावित करते रहते हैं। इसका एक सीधा अर्थ यह भी हुआ कि जीवधारी और पर्यावरण के बीच अन्योन्याश्रय (एक दूसरे पर आश्रित) का संबंध होता है। आज इसी पर्यावरण के प्रदूषण के चलते दुनिया जलवायु परिवर्तन से जूझ रही है। सामान्य तौर पर जलवायु परिवर्तन औसत मौसमी दशाओं के पैटर्न में व्यापक बदलाव आने को कहते हैं। अब जलवायु की इन दशाओं में यह बदलाव प्राकृतिक भी हो सकता है और मानव के क्रियाकलापों के परिणामस्वरूप भी। बहरहाल, ग्रीन हाउस प्रभाव और वैश्विक तापन को मनुष्य की क्रियाओं का परिणाम माना जा रहा है, जो औद्योगिक क्रांति के बाद मनुष्य द्वारा उद्योगों से उत्सर्जित कार्बन डाई आक्साइड आदि गैसों के वायुमंडल में अधिक मात्रा में संकेंद्रित हो जाने के कारण हुआ है।

List of Top 10 Countries by Carbon Dioxide Emissions

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

Country	Co_2 Emissions (kt)	EmissionPer Capita
World	35,270,000	--
China	10,330,000	7.4
U.S.A.	5,300,000	16.6
European Union	3,740,000	7.3
India	2,070,000	1.7
Russia	1,800,000	12.6
Japan	1,360,000	10.7
Germany	840,000	10.2
South Korea	630,000	12.7
Canada	550,000	15.7
Indonesia	510,000	2.6

Source:- Trends in Globle Co2 Emissions Report 2014, PBL Netherlands Environmental Assessment Agency Accessed on 20 Oct. 2015 at http://edgar.yrc.ec.europa.eu/news_docs/jrc-2014 trer.

समस्या का प्रभाव

एक तरफ मानव आबादी बेतहाशा बढ़ी है तो दूसरी ओर उत्पादन गतिविधियाँ भी अनवरत बढ़ती जा रही हैं। नतीजतन कार्बन डाईऑक्साइड (सी.ओ.2), मीथेन (सी.एच.4), नाइट्रस ऑक्साइड (एन.2ओ.), क्लोरो–फ्लोरोकार्बन (सी.एफ.सी.), कार्बन टेट्राक्लोराइड (सी.सी.एल.4), कार्बन मोनोआक्साइड (सी.ओ.) और अन्य गैसें वातावरण में केंद्रित होती जा रही हैं, जिससे हवा की गुणवत्ता प्रभावित हो रही है जिसके कारण धीरे–धीरे जलवायु भी प्रभावित हो रही है। ग्लोबल वार्मिंग के कारण धरती का तापमान बढ़ रहा है तो ध्रुवीय बर्फ भी पिघल रही है। बर्फ के इस तरह पिघलने से समुद्र का जल स्तर हर साल छह सेंटीमीटर बढ़ रहा है। निश्चित रूप से समुद्र का स्तर बढ़ने से एक सीमा के बाद तटीय क्षेत्रों में पानी भर जायेगा, जिससे लाखों लोगों को विस्थापित होना पड़ेगा। दूसरी ओर ग्लोबल वार्मिंग के चलते मौसम भी प्रभावित हो रहा है। वायुमंडलीय संरचना में बदलाव आने लगा है। यह बदलाव बड़ी ही सहजता से पारिस्थितिकी तंत्र में विनाशकारी परिवर्तन ला रहा है।

इसके कारण कहीं सूखा तो कहीं बाढ़ का प्रकोप बढ़ता जा रहा है। यानी वैश्विक जलवायु परिवर्तन से मानव जीवन की पूरी एक श्रृंखला इससे प्रभावित हो रही है। ओजोन की परत प्रभावित होने से सूरज की पराबैगनी किरणें अवशोषित नहीं हो पा रही हैं। सीधे धरती पर पहुँचने वाली ये पराबैगनी किरणें तमाम परेशानियों का कारण बनती जा रही हैं। एक तरफ जैव विविधता नष्ट हो रही है, तो दूसरी ओर प्रदूषण के

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

कारण अम्ल वर्षा (Rain Acid) बढ़ी है। पृथ्वी से हरे रंग की स्क्रीन नष्ट हो रही है। यानी वन समाप्त हो रहे हैं। औसतन हर साल 4000 वर्ग किमी0 वन समाप्त हो रहा है। प्रदूषण के कारण रेगिस्तान क्षेत्र बढ़ रहा है। वायुमंडलीय प्रदूषण से हर साल 70 करोड़ लोग तमाम तरह की बीमारियों की चपेट में आ रहे हैं। खासकर महिलाएँ और बच्चे इसके शिकार बन रहे हैं। जल प्रदूषण, समुद्र प्रदूषण अति खतरनाक रूप लेता जा रहा है। खतरनाक कचरे, रेडियोधर्मी कचरे मानव अस्तित्व के लिए ही खतरा बन चुके हैं।

समस्या समाधान के क्या हो रहे प्रयास

यूँ तो लाखों वर्षों से अपरिवर्तनशील रहे वातावरण में व्यापक पैमाने पर मानवीय हस्तक्षेप 18वीं शताब्दी में औद्योगिक क्रांति के साथ ही शुरू हो चुका था, लेकिन जबर्दस्त वृद्धि हुई द्वितीय विश्व युद्ध के बाद। किन्तु कुलाँचे भरकर आगे बढ़ते इस विकास का दूसरा पहलू सामने आते ही एकबारगी लोग सन्न रह गये। क्योंकि 1960 के दशक में एसिड वर्षा के रूप में इसका दुष्परिणाम सामने आने लगा था। तब अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन ने 1969 में राजनीतिक एजेंडे में जलवायु परिवर्तन को दुनिया के सामने रखा, क्योंकि इससे पूर्व अध्ययन में यही पाया गया कि पर्यावरण प्रदूषण के कारण एसिड की बारिश बढ़ी है। उसी के तीन साल बाद 1972 में मानव पर्यावरण पर स्टॉकहोम में सम्मेलन का आयोजन किया गया। तब पहली बार पर्यावरण संरक्षण और आर्थिक विकास का अंतर्संबंध स्पष्ट रूप से स्थापित होकर सामने आये। पर्यावरण प्रदूषण के इस खतरे को पूरी तरह से कोई और भाँप पाया हो या नहीं, पर भूटान के सरकार ने इसका अनुमान लगा लिया था। इसीलिए उसने देर किये बगैर विकास के सूचकांक सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) को बदलकर उसका नाम सकल घरेलू खुशी (जीडीएच) कर दिया था। ऐसा करने के पीछे उसकी सोच यही थी कि विकास से ज्यादा जरूरी है मानव जीवन की रक्षा और उसकी वास्तविक खुशी।

यह सब कुछ उसने पर्यावरण संरक्षण के लिए किया। अब तक अलग–अलग स्तरों एवं तमाम देशों में निजी स्तर पर पर्यावरण संरक्षण का काम शुरू हो चुका था, लेकिन अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर यह मुद्दा पहली बार 1985 में जी–7 आर्थिक शिखर सम्मेलन में प्रमुखता से उठाया गया। इसमें अमेरिका के राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन के अलावा कई अन्य नेताओं ने संयुक्त रूप से पर्यावरण संरक्षण के लिये दुनिया का आह्वान किया। इसी तरह 1987 में पृथ्वी और विकास पर विश्व आयोग की रिपोर्ट आई तो पर्यावरण संरक्षण का मुद्दा और सशक्त होकर उभरा। लेकिन इस दिशा में सबसे बड़ा काम हुआ रियो डी जनेरियो में 1992 में आयोजित पृथ्वी शिखर सम्मेलन में। इस सम्मेलन में दुनिया भर के कई बड़े नेता शामिल हुए थे। सम्मेलन में पर्यावरण संरक्षण का एक ढाँचा तैयार करने पर बल दिया गया। इसी के तहत पर्यावरण संरक्षण के लिये यूनाइटेड नेंशंस फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज (यूएनएफसीसीसी) की स्थापना की गई। पर्यावरण संरक्षण के लिए वैश्विक लड़ाई अब तक तेज हो चुकी थी, लेकिन समस्या यह थी कि बिल्ली के गले में घंटी कौन बांधेगा।

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

क्योंकि इस बीच एक नई बहस शुरू हो चुकी थी कि पर्यावरण को विकसित देशों ने क्षति पहुँचाई है, इसलिए उसे ठीक करने की जिम्मेदारी भी वही उठाएँ।

यह भी माँग उठने लगी कि कार्बन उत्सर्जन का सबको समान अवसर दिया जाये। इसे लेकर लगातार राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और अतंर्राष्ट्रीय मंचों पर बहस–मुबाहिसा और सम्मेलन लगातार जारी है। फिलहाल यह विकसित और विकासशील देशों के बीच लंबे समय तक खत्म न होने वाली लड़ाई है, पर सुखद बात यह है कि इन सब घटनाक्रमों के बीच जलवायु परिवर्तन की समस्या से निपटने के लिए साझा प्रयास पर सहमति जरूर बनने लगी है। सबसे बड़ी बात यह है कि पर्यावरण संरक्षण के लिए जलवायु का वित्तीयन (क्लाइमेंट फाइनेंस) होने लगा है।

क्या है जलवायु वित्तीयन

जलवायु परिवर्तन से निपटने का मतलब है अपनी अर्थव्यवस्था को भारी नुकसान पहुँचाना, क्योंकि प्रदूषण रोकने के लिए सभी निर्धारित मानकों को पूरा करना आसान नहीं है। इसका सीधा सा अर्थ है यह काम अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुँचा कर ही करना पड़ेगा। इस बात को सभी देशों के प्रमुख अच्छी तरह जानते हैं। ब्रिटेन के पूर्व प्रधानमंत्री टोनी ब्लेयर ने स्पष्ट शब्दों में इसे स्वीकार भी किया है। उनका कहना है, ''जलवायु परिवर्तन की राजनीति का यह एक कड़वा सच है कि कोई भी देश जलवायु परिवर्तन की चुनौती से निपटने में अपनी अर्थव्यवस्था का बलिदान नहीं करना चाहता, लेकिन सारी अर्थव्यवस्थाएँ यह जानती हैं कि अधिक लंबे समय तक विकसित होते रहने के लिए उन्हें वैश्विक पर्यावरण संरक्षण के प्रति अनिच्छुक शुभचिंतक बने रहना पड़ेगा।''

टोनी ब्लेयर ने भले ही हालात और जरूरतों के बारे में खुलकर बोला हो, पर सच तो यह है कि वित्तीयन के जरिये जलवायु परिवर्तन के संकट का प्रबंधन आज उतना ही जरूरी एवं महत्वपूर्ण भी है, जितने अन्य उपाय हैं। जलवायु वित्तीयन, इसलिए भी एक सशक्त माध्यम बन सकता है, क्योंकि यह स्थानीय, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय किसी भी तरह का हो सकता है। इसके लिए व्यापक स्तर पर निवेशों के जरिये ही उत्सर्जन में कटौती के लिए विभिन्न योजनाएँ और कार्यक्रम संचालित किये जा सकते हैं। दुनिया में जलवायु वित्तीयन इन्हीं उद्देश्यों के लिए जोर पकड़ती जा रही है। आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (ओईसीडी) की परिषद् ने यह जलवायु परिवर्तन की समस्या से निपटने के लिए धारणा विकसित की थी कि प्रदूषणकर्ता भुगतान करें। समय को देखते हुए यह जरूरी भी है। इस सिद्धांत के जरिये अपेक्षा की गई कि प्रदूषण नियंत्रण उपायों को बेरोकटोक चलाने के लिए प्रदूषणकर्ता जिम्मेदारी लें।

प्रदूषण के नियंत्रण की जिम्मेदारी लेने के पहले प्रदूषक व प्रदूषण की परिभाषा को समझना आवश्यक है। ओईसीडी ने वर्ष 1975 में प्रदूषक को इन शब्दों में परिभाषित किया था, एक प्रदूषक वह व्यक्ति है जो

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण क्षरण का कारण बनता है अथवा क्षरण के लिए दशाएँ निर्मित करता है। एक औद्योगिक संयंत्र से प्रदूषण की दृष्टि से प्रदूषणकर्ता सामान्यतया संयंत्र प्रचालक होता है। ओईसीडी का प्रदूषणकर्ता स्वयं भुगतान करने का सिद्धान्त 1990 के दशक से ही स्वीकृत अंतर्राष्ट्रीय पर्यावरणीय प्रतिमान बना चुका है। जिसे 1987 के एकल यूरोपियन अधिनियम, यूरोपीय आयोग के पर्यावरणीय नीतियों, मैस्ट्रिच की संधि, 1992 और एम्सटर्डम संधि, 1999 में स्पष्ट रूप से मंजूरी दी गयी। इन सबके बावजूद जलवायु वित्तीयन को तब तक लोग हल्के में लेते रहे, जब तक कि 1994 में गठित यूएनएफसीसीसी के तहत इसे औपचारिक व संस्थागत स्तर पर उठाया नहीं गया।

यूएनएफसीसीसी के तत्वाधान में जलवायु वित्तीयन का मुद्दा

जलवायु परिवर्तन पर यूएनएफसीसीसी के तत्वाधान में जलवायु वित्तीयन के प्रश्न को अनुकूलन और शमन से जोड़कर देखा गया है। यूएनएफसीसीसी ने अनुकूलन को स्पष्ट रूप से परिभाषित किया कि यह किसी वास्तविक अथवा संभावित जलवायविक प्रभावों के प्रत्युत्तर में पारिस्थितिक, आर्थिक और सामजिक तंत्र में किया गया समायोजन है। यह जलवायु परिवर्तन के संभावित खतरों के शमन अथवा जलवायु परिवर्तन से जुड़े अवसरों से लाभ उठाने के लिए प्रक्रियाओं, व्यवहारों व संरचनाओं में बदलाव की ओर भी संकेत करता है। उल्लेखनीय है कि जलवायु परिवर्तन के विपरीत प्रभावों से बचने के लिए या अनुकूलन के लिए भारी मात्रा में वित्त व निवेशों की जरूरत होती है। मिसाल के तौर पर बाढ़ से बचने के लिए सुरक्षा उपाय, चक्रवातों की जानकारी के लिए पूर्व अनुमान प्रणालियों की स्थापना, ऐसी फसलों की तरफ रूख करना जो सूखे की स्थितियों से अनुकूलन करने में सक्षम हों, संचार प्रणालियों का गठन आदि की जरूरत को देखें तो ये जलवायु वित्तीयन के औचित्य को स्पष्ट करते हैं।

जहाँ तक शमन की बात है तो यूएनएफसीसीसी शमन को ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन को रोकने के प्रयास के रूप में परिभाषित करता है। नई प्रौद्योगिकियों का इस्तेमाल, नवीकरणीय ऊर्जा संसाधनों के उत्पादन व उपयोग पर बल, पुराने उपकरणों को अधिक ऊर्जा कार्यकुशल बनाना, प्रबंधन, कार्यप्रणाली व उपभोक्ता व्यवहार में बदलाव शमन उपायों की जरूरत को बताने के लिए पर्याप्त है। यूएनएफसीसीसी के अंतर्गत वर्तमान में जो वित्तीय प्रणाली कार्यशील हैं, उनका संक्षिप्त विवरण निम्न है–

- **ग्लोबल एनवायरमेंट फेसिलिटी (जीईएफ):** इसका गठन वर्ष 1991 में किया गया था। यह विकासशील अर्थव्यवस्था को जैव विविधता, जलवायु परितर्वन, अंतर्राष्ट्रीय जल, भूमि अवमूल्यन, ओजोन क्षरण, जैविक प्रदूषकों के संदर्भ में परियोजनाएँ चलाने के लिए वित्त पोषित करता है। यह धन अनुदान व रियायती वित्तीयन के रूप में आता है। यह सुविधा यूएनएफसीसीसी के तहत दो अन्य कोषों– अल्प विकसित देश कोष (एलडीसीएफ) और विशेष जलवायु परिवर्तन कोष (एससीसीएफ) के माध्यम से प्रदान की जाती है।

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

- **अल्पविकसित देश कोष (एलडीसीएफ):–** इस कोष का गठन अल्पविकसित देशों को नेशनल एडैप्टेशन प्रोग्राम्स ऑफ एक्शन (एनएपीए) के क्रियान्वयन में सहायता के लिए किया गया था। एनएपीए के जरिये अल्पविकसित देशों के अनुकूलन क्रिया की प्राथमिकता चिन्हित की जाती है। इस कोष के तहत अन्य विकसित देशों को कृषि, प्राकृतिक संसाधन, प्रबंधन, जलवायु सूचना सेवाएँ, जल संसाधन प्रबंधन, तटीय क्षेत्र प्रबंधन, आपदा प्रबंधन आदि के दृष्टिकोण से आकलन किया जाता है। मौजूदा समय में 51 अल्प विकसित देशों (एलडीसी) को अपने एनएपीए की स्थापना में सहायता के लिए 12.20 मिलियन डॉलर प्रदान किया जा चुका है।
- **विशेष जलवायु परिवर्तन कोष (एससीसीएफ):–** यह कोष यूएनएफसीसीसी के तहत वर्ष 2001 में स्थापित हुआ था। इसका उद्देश्य अनुकूलन, तकनीकी हस्तांतरण, क्षमता निर्माण, ऊर्जा, परिवहन, उद्योग, कृषि, वानिकी और अपशिष्ट प्रबंधन एवं आर्थिक विविधीकरण से संबंधित परियोजनाओं के वित्तीयन का था। यह जीवाश्म ईंधन से प्राप्त आय पर अत्यधिक निर्भर देशों में आर्थिक विविधीकरण व जलवायु परिवर्तन राहत के रूप में अनुदान प्रदान करता है।
- **एडैप्टेशन फंड (अनुकूलन कोष):–** इस कोष का गठन भी वर्ष 2001 में किया गया था। इसका उद्देश्य 1997 के क्योटो प्रोटोकॉल के साझेदार विकासशील देशों में अनुकूलन परियोजनाओं व कार्यक्रमों को फाइनेंस करना था। इसके तहत ऐसे राष्ट्रों पर विशेष ध्यान दिया जाता है जो जलवायु परिवर्तन के सर्वाधिक गंभीर खतरों का सामना कर रहे हैं। इस कोष को क्लीन डेवलपमेंट मेकेनिज्म (सीडीएम) से राशि प्राप्त होती है। एक सीडीएम प्रोजेक्ट गतिविधि के लिए जारी सर्टिफाइड एमीशन रिडक्शन (सीईआर) का दो प्रतिशत इस कोष में जाता है।
- **ग्रीन क्लाइमेट फंड (जीसीएफ):–** यह यूएनएफसीसीसी के तहत काम करने वाली एक अति महत्वपूर्ण अंतराष्ट्रीय वित्तीय संस्था है। वर्ष 2009 में कोपेनहेगन में हुए संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन में हरित जलवायु कोष (जीसीएफ) के गठन का प्रस्ताव रखा गया था, जिसे 2011 में डरबन में हुए सम्मेलन में स्वीकृति मिली थी। यह कोष विकासशील देशों को जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए सहायता राशि प्रदान करता है। कोपेनहेगन व कॉनकुन समझौते में विकसित देश इस बात पर सहमत हुए थे कि वर्ष 2020 तक लोग व निजी वित्त के रूप में हरित जलवायु कोष के तहत विकासशील देशों को 100 बिलियन डॉलर की राशि उपलब्ध कराया जायेगा। वहीं वारसा में आयोजित 19वें संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन में 2016 तक 70 बिलियन डॉलर देने का लक्ष्य तय किया गया, जिसे विकासशील राष्ट्रों ने अस्वीकार कर दिया। उल्लेखनीय है कि नवंबर 2010 में संयुक्त राष्ट्र जलवायु

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

परिवर्तन सम्मेलन के 16वें सत्र (कोप–16) में स्टैंडिंग कमिटी ऑन फाइनेंस के गठन का निर्णय किया गया था ताकि विकासशील देशों की जरूरतों का ध्यान रखा जा सके।

जलवायु वित्तीयन की स्थिति

जलवायु वित्तीयन पर पिछले एक दशक से विकसित व विकासशील देशों के बीच मतभेद बरकरार है। एक तरफ जहाँ विकसित देश पृथ्वी की धारणीय शक्ति की सीमा को नजरअंदाज कर प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन कर रहे हैं, वहीं कृषि प्रधान विकासशील देशों में पृथ्वी व प्राकृतिक संसाधनों को जीवन–समर्थनकारी प्रणाली के रूप में देखा जाता है। इन सबके बावजूद विकसित देश विकासशील देशों के लिए वित्तीय दायित्व का बोझ उठाने को बहुत ही अनमने भाव से तैयार हैं। हालाँकि भले ही विकसित देश पर्यावरण सुधार का उत्तरदायित्व लेने के प्रति अनिच्छुक हों, बावजूद इसके यूएनएफसीसीसी के तहत पिछले कुछ वर्षों में काफी प्रगति हुई है, जो निम्न हैं–

कॉनकुन सम्मेलन (कोप–16):– वर्ष 2010 में कॉनकुन सम्मेलन में अन्य प्रावधानों के अलावा जलवायु वित्तीयन से संबंधित निम्न प्रमुख प्रावधान किये गये थे–

- विकासशील देशों की पर्यावरणीय चुनौतियों के चलते उभरे वित्तीय बोझ को कम करने के लिए विकसित देशों द्वारा 2010–12 की कालावधि में 30 बिलियन डॉलर प्रदान करने पर सहमति बनी। सम्मेलन में त्वरित वित्तीयन पर बल दिया गया। इसके पीछे सोच यही थी कि इससे इस जलवायु परिवर्तन की दिशा में संबंधित देश जल्द से जल्द कदम उठाएंगे।
- विकसित देश 2020 वचनबद्धता के तहत वर्ष 2020 तक हरित जलवायु कोष के तहत विकासशील देशों को 100 बिलियन डॉलर की सहायता करेंगे।

डरबन प्लेटफार्म, 2011:– संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन (कोप–17) में हरित जलवायु कोष को पक्षकार विकासशील देशों में परियोजनाओं, कार्यक्रमों, नीतियों व अन्य गतिविधियों के समर्थन के लिए यूएनएफसीसीसी के कांफ्रेंस ऑफ पार्टीज के तहत जिम्मेदार बनाया गया। डरबन प्लेटफार्म ने इस बात की पुष्टि की कि यूएनएफसीसीसी के तहत हरित जलवायु कोष वित्तीय तंत्र की प्रचालक इकाई होगी।

दोहा गेटवे और हरित जलवायु कोषः– वर्ष 2012 में कतर की राजधानी दोहा में आयोजित कोप–18 में दीर्घकालिक जलवायु वित्तीयन के मुद्दे पर विचार- विमर्श हुआ। विकसित देशों ने इस बात के प्रति अपनी वचनबद्धता फिर व्यक्त की कि वे 2020 तक अनुकूलन व शमन के मुद्दों के प्रबंधन के लिए विकासशील देशों को 100 बिलियन डॉलर की सहायता प्रदान करेंगे। सम्मेलन में कहा गया कि 2013 व 2015 में हरित जलवायु कोष के तहत प्रदान की जाने वाली राशि 2010–12 के लिए निर्धारित राशि (30 बिलियन डॉलर) के बराबर होनी चाहिए।

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

वारसा सम्मेलन, 2013:– पोलैण्ड की राजधानी वारसा में सम्मेलन संपन्न हुआ। इस सम्मेलन में जलवायु वित्तीयन का मुद्दा काफी प्रमुखता से उठाया गया। सम्मेलन में एक बार फिर से 2020 तक 100 बिलियन डॉलर खर्च करने की वचनबद्धता दोहराई गई। यह भी निर्णय किया गया कि वर्ष 2014–20 के लिए हर दो साल में दीर्घकालिक वित्तीयन के लिए मंत्रिस्तरीय बैठक आयोजित की जायेगी। सम्मेलन में एक अति महत्वपूर्ण घोषणा भी हुई थी वह यह कि हरित जलवायु कोष व्यावसायिक कार्यों के लिए भी खोल दिया गया है और यह 2014 के मध्य से अपनी शुरूआती संसाधन गतिशीलता प्रक्रिया को शुरू कर देगा। लेकिन इस सम्मेलन में एक असहमति का भी मुद्दा सामने आया। विकसित देशों ने 2016 तक 70 बिलियन डॉलर देने का लक्ष्य तय किया, जिसे विकासशील देशों ने अस्वीकार कर दिया।

लेकिन यह जरूर है कि इस सम्मेलन में वारसा इंटरनेशलन मैकेनिज्म फॉर लॉस एण्ड डैमेज के गठन का महत्वपूर्ण निर्णय किया गया। इसके गठन का मुख्य उद्देश्य जलवायु परिवर्तन की दृष्टि से सर्वाधिक संवेदनशील देशों, विकासशील देशों और लघु द्वीपीय देशों को गंभीर जलवायविक दशाओं जैसे बाढ़, सूखा, चक्रवात, समुद्री जल स्तर में वृद्धि से सुरक्षा प्रदान करता है। उल्लेखनीय है कि प्राकृतिक आपदाओं से होने वाला नुकसान एक दशक पहले प्रति वर्ष 200 बिलियन डॉलर से बढ़कर वर्तमान समय में 300–400 बिलियन डॉलर प्रति वर्ष हो गया है। सम्मेलन में अमेरिका, नार्वे व यूनाइटेड किंगडम द्वारा वारसा फ्रेमवर्क फॉर आरईईडी+ के लिए 280 मिलियन डॉलर के वित्तीयन की घोषणा की गई।

संयुक्त राष्ट्र जलवायु शिखर सम्मेलन, 2014 और जलवायु वित्तीयन का मुद्दा

वर्ष 2014 के संयुक्त राष्ट्र जलवायु शिखर सम्मेलन का आयोजन न्यूयार्क में हुआ। 23 सितम्बर को संपन्न इस सम्मेलन में जलवायु वित्तीयन की दिशा में कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष सामने आये जो निम्न हैं–

- वैश्विक तापमान को कम करने के लक्ष्य पर ध्यान देकर इस सम्मेलन में सरकारों, व्यवसाय, बहुपक्षीय विकास बैंकों, सिविल सोसाइटी नेताओं के नये संघ ने लो–कार्बन और जलवायु–सह्य विकास की दिशा में 200 बिलियन डॉलर की व्यवस्था करने की घोषणा की। 2020 तक 100 बिलियन डॉलर प्रदान करने में अपेक्षित सहयोग की भी राष्ट्रों ने घोषणा की। सम्मेलन में कहा गया कि हरित विकास कोष की प्रारंभिक पूंजी 10 बिलियन डॉलर से कम नहीं होगी। अभी तक 6 देशों द्वारा इस कोष की प्रारंभिक पूँजीधारिता में कुल 2.3 बिलियन डॉलर का योगदान करने का वचन दिया गया है।
- यूरोपीय संघ ने वर्ष 2014 से 2020 के मध्य विकासशील देशों में शमन उपायों के लिए 30 बिलियन डॉलर देने का वायदा किया है।
- इंटरनेशनल डेवलपमेंट फिनांस क्लब (आईडीएफसी) ने सम्मेलन में घोषणा की कि वह 2015 के अंत तक नई जलवायु वित्तीयन गतिविधियों के लिए 100 बिलियन डॉलर के जलवायु परिवर्तन के लिए सक्षम है।

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

- प्रमुख वाणिज्यिक बैकों ने घोषणा की कि 2015 तक उनकी 30 बिलियन डॉलर मूल्य वाले ग्रीन बांड करने की मंशा है और 2020 तक इसमें 10 गुना वृद्धि की जायेगी।
- बीमा उद्योग ने वर्ष 2015 के अंत तक अपने हरित निवेश को दुगुना करने (84 बिलियन डॉलर) पर बल दिया।
- बीमा उद्योग के प्रतिनिधियों ने सम्मेलन में 2015 तक एक क्लाइमेट रिस्क इन्वेस्टमेंट निर्मित करने का आह्वान किया।

इस प्रकार इस सम्मेलन में जलवायु वित्तीयन के विविध पहलुओं पर सकारात्मक कार्य करने की मंशा जाहिर की गई, लेकिन विकसित व विकासशील देशों में एक स्पष्ट साझी समझ का विकसित होना अभी भी आवश्यक है। समस्या की पहचान करना, ऑकलन, बेहतर समन्वयन व प्रबंधन आदि से जुड़ी चुनौतियों की निगरानी भी आवश्यक है। ध्यातव्य है कि वर्ष 2007 में जलवायु वित्तीयन समीक्षा रिपोर्ट में यूएनएफसीसीसी के तत्वाधान में स्पष्ट किया गया था कि जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों, अनुकूलन व कटौती उपायों के लिए आवश्यक धनराशि व निवेश वर्ष 2030 तक वैश्विक सकल उत्पाद के 0.3 से 0.5 प्रतिशत के बराबर होगा, जबकि वैश्विक निवेश के 1.1 से 1.7 प्रतिशत की आवश्यकता होगी। इस परिप्रेक्ष्य में अंतराष्ट्रीय समुदाय से जलवायु वित्तीयन पर एक सद्भावपूर्ण पहल किये जाने की अपेक्षा एक वैध माँग है।

वित्तीयन के क्या मिले हैं परिणाम

जैसा कि हर गंभीर मसले में होता है, इस मामले में भी वैसा ही कुछ हो रहा है। भले ही जलवायु परिवर्तन की समस्या से निपटने के लिए आम सहमति बनाने का प्रयास होता है, लगातार संवाद स्थापित करने और दिन पर दिन बदलती जरूरतों के हिसाब से फंडिंग या नये अंतराष्ट्रीय कानून, अंतराष्ट्रीय व्यवस्था या फिर पुराने कानूनों में संशोधन, समस्याओं की गंभीरता का ऑकलन–अध्ययन, रोकथाम के क्रिया कलापों की समीक्षा आदि के लिए विभिन्न राष्ट्रीय अंतराष्ट्रीय मंचों के तत्वावधान में सम्मेलन आयोजित होते हैं। इन सबके बावजूद इस दिशा में कोई अपेक्षित लाभ नहीं मिल पा रहा है। शायद इसकी वजह यही है कि संसाधनों के अत्यधिक दोहन और प्रदूषण पर पर्याप्त अंकुश न लगाने के पीछे विकसित देशों का अपना स्वार्थ है तो विकासशील देशों का अपना। चूँकि दोनों ही अनिच्छापूर्वक और केवल रस्मअदायगी ही कर रहे हैं, इसलिए जलवायु परिवर्तन लगातार खतरनाक रूप लेता जा रहा है।

कुछ अन्य उपाय

तमाम फंडिंग या वित्तीयन से अलग अगर देखा जाये तो कार्बन क्रेडिट ज्यादा प्रभावी साबित हो रहा है। दरअसल यह एक ऐसी व्यवस्था है जिसके तहत उद्योग कार्बन उत्सर्जन में कमी लाकर ज्यादा से ज्यादा वित्तीय सहायता या ऋण प्राप्त कर सकते हैं। मतलब यह है कि कार्बन क्रेडिट अंतर्राष्ट्रीय उद्योग में

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

उत्सर्जन नियंत्रण की एक योजना है। यह उद्योगों द्वारा किये गये कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करने का प्रयास है, जिसे प्रोत्साहन देने के लिए इसे धन से जोड़ दिया गया है। भारत और चीन सहित और कई एशियाई देश जो मौजूदा समय में विकास की प्रक्रिया में हैं, उन्हें इसका ज्यादा लाभ मिलता है, क्योंकि वे कोई भी उद्योग धंधा स्थापित करने के लिए यूएनएफसीसीसी से संपर्क कर उसके मानदंडों के अनुरूप निर्धारित कार्बन उत्सर्जन स्तर नियंत्रित कर सकते हैं। यदि वे उस निर्धारित स्तर से नीचे, कार्बन उत्सर्जन कर रहे हैं तो निर्धारित स्तर व आपके द्वारा उत्सर्जित कार्बन के बीच का अंतर कार्बन क्रेडिट कहलाता है।

वर्तमान में इस कार्बन क्रेडिट को कमाने के लिए तमाम उद्योग धंधे कम कार्बन उत्सर्जन वाली नई तकनीक को अपनाने को प्राथमिकता दे रहे हैं। इसलिए यह प्रक्रिया सीधे तौर पर पर्यावरण संरक्षण के साथ–साथ आर्थिक लाभ भी प्रदान कराने वाली है। यूरोपीय देशों में यह काफी प्रचलित हो रहा है। वहाँ टन कम कार्बन उत्सर्जन पर कोई भी उद्योग 25 से 30 यूरो कमा सकता है। वहाँ सामान्य तौर पर इस सबका हिसाब–किताब दिसम्बर महीने में होता है। उसी दौरान क्रेडिट अनुबंधों का समापन एवं नवीनीकरण कर क्रेडिट्स का आदान–प्रदान किया जाता है। एक उदाहरण के माध्यम से इसे और स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है। मिसाल के तौर पर कोई एक मेगावाट प्रति घंटे की क्षमता वाली पवन चक्की प्रतिवर्ष लगभग 1800 कार्बन क्रेडिट पैदा करती है, क्योंकि यह बिजली पैदा करने के लिए पवन ऊर्जा का इस्तेमाल करती है और उसे भारतीय ग्रिड में डालती है। इसका मतलब यह है कि ग्रिड ने एक मेगावाट प्रति घंटा बिजली पैदा करने के लिए सामान्यतः कोयला या प्राकृतिक गैस (जीवाश्म ईंधन) जलाई होती, किन्तु अब वह पवन चक्की परियोजना से आपूर्ति की जा रही है।

इस प्रकार पवन चक्की का मालिक कार्बन लाभ के लिए आवेदन कर सकता है और ग्रिड द्वारा जीवाश्म ईंधन के उपयोग में कमी लाने के कारण कार्बन बचत के लिए पात्र है। यह ग्रिड में हर वर्ष डाली गई बिजली इकाइयों की संख्या के आधार पर कार्बन क्रेडिट में बदल जाता है। भारत में दिल्ली मेट्रो को संयुक्त राष्ट्र से कार्बन क्रेडिट मिल चुका है। इस बारे में संयुक्त राष्ट्र का कहना है कि जैसे–जैसे यात्रियों की संख्या बढ़ती जायेगी ये सहायता और बढ़ जायेगी। दरअसल दिल्ली मेट्रो दुनिया का पहला ऐसा रेलवे नेटवर्क बना है जिसे संयुक्त राष्ट्र ने ग्रीन हाउस गैसों में कमी लाने के लिए कार्बन क्रेडिट दिया है। संयुक्त राष्ट्र ने जारी एक विज्ञप्ति में यह बताया है कि इस परिवहन प्रणाली ने शहर का प्रदूषण स्तर एक साल में 6,30,000 टन कम किया है। उसका कहना है कि अगर मेट्रो नहीं होती तो दिल्ली में 18 लाख लोग रोज, कार, बस या मोटर साइकिल का इस्तेमाल करते जिससे प्रदूषण में बढ़ोत्तरी होती। मेट्रो रेल को इस उपलब्धि के लिए अब सात सालों के लिए 95 लाख डॉलर कार्बन क्रेडिट के तौर पर मिलेंगे। संयुक्त राष्ट्र का यह भी कहना है कि, जो भी यात्रा कार या बस की बजाय मेट्रो का इस्तेमाल करते हैं वे हर 10 किलोमीटर की दूरी के लिए तकरीबन 100 ग्राम कार्बन डाईऑक्साइड में कमी लाते हैं और इससे जलवायु

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

परिवर्तन में कमी लाने में मदद मिलती है। वैसे अब तो कार्बन ट्रेडिंग भी शुरू हो गई है। अर्थात इस तरह से पैदा किये गये कार्बन क्रेडिट दो कंपनियों के बीच अदला बदली भी किये जा सकते हैं व इन्हें अंतर्राष्ट्रीय बाजार के प्रचलित मूल्यों के हिसाब से बेंचा भी जा सकता है। साथ साथ इन क्रेडिट्स को कार्बन उत्सर्जन योजनाओं के लिए कर्ज पर भी लिया जा सकता है। बहुत सी ऐसी कंपनियाँ हैं जो कार्बन क्रेडिट्स को निजी एवं व्यावसायिक ग्राहकों को बेंचती हैं। यह ग्राहक वह होते हैं जो अपना कार्बन उत्सर्जन नियंत्रित रख कर जो लाभ मिलते हैं वह लेना चाहते हैं।

एक विश्लेषण के मुताबिक जैसी स्थितियाँ बन रहीं हैं उससे ऐसा संकेत मिलता है कि आने वाले समय में भारत एवं चीन जैसे देश इस लायक होंगे कि वह कार्बन क्रेडिट्स बेंच सकें और यूरोपीय देश इन क्रेडिट के सबसे बड़े ग्राहक होंगे। पिछले कुछ वर्षों से क्रेडिट का वैश्विक व्यापार लगभग 6 बिलियन डॉलर अनुमानित किया गया था जिसमें भारत का योगदान लगभग 22 से 25 प्रतिशत होने का अनुमान था। भारत और चीन दोनों देशों ने कार्बन उत्सर्जन को निर्धारित मानदंडों से नीचे रखकर क्रेडिट जमा किये हैं। यदि हमारे देश की बात करें तो भारत में लगभग 30 मिलियन क्रेडिट्स पैदा किये हैं और आने वाले समय में संभवतः 140 मिलियन क्रेडिट्स और तैयार हो जायेंगे जिन्हें विश्व बाजार में बेंचकर पैसा कमाया जा सकता है। इसके अलावा स्वच्छ विकास प्रणाली (सीडीएम), स्वैच्छिक कार्बन मानक (वीसीएस) और कार्बन आफसेट्स (आईएसओ 14064) जैसी योजनाएँ भी कारगर साबित हो रही हैं। ताजातरीन उपायों में भारत सरकार ने पिछले माह के आखिर में घोषणा की कि वह कार्बन क्रेडिट की तर्ज पर ट्री क्रेडिट स्कीम की शुरूआत करेगी। इस योजना के तहत किसानों और निजी भूमि मालिकों को उनकी बेकार पड़ी जमीन पर पेड़ पौधे लगाने पर वित्तीय प्रोत्साहन मिलेगा। इसके अलावा 100 स्मार्ट शहर बसाने की योजना के साथ ग्रीन सिटी अभियान की भी शुरूआत करेगी। इस स्कीम का मकसद देश में वृक्ष और वन क्षेत्र बढ़ाना है।

किसका फायदा किसका नुकसान

पर्यावरण संघर्ष समाधान हेतु उत्तर–दक्षिण दुनिया के बनते बिगड़ते वैश्विक समीकरण तथा विकसित औद्योगिक देशों की हठधर्मिता प्रायः यह बयाँ करती है कि आखिर पर्यावरण के तेजी से बदलते मिजाज, प्राकृतिक आपदाओं की बारंबारता, जैवविविधता व पारिस्थितिकी में बड़े पैमाने पर क्षरण की घटनाएँ किन क्षेत्रों को ज्यादा या कम नुकसान पहुँचायेंगी। जबकि पर्यावरण एक ऐसा विषय है जो वास्तव में मानचित्र व किसी निश्चित भू–भाग पर उकेरी गयी सीमाओं के अनुसार नहीं चलता। फिर, यह कहना कि पर्यावरण एवं विकास के पैमानों के बदलने से किसका फायदा होगा और किसका नुकसान बड़ा ही दिलचस्प मोड़ लेता हुआ दिखाई पड़ता है। हलाँकि यह सही है कि पर्यावरण में सर्वाधिक विनाश के लिए विकसित औद्योगिक देश एवं उनकी नीतियाँ जिम्मेदार हैं, किन्तु उसका असर उन पर नहीं पड़ेगा, यह असंभव हैं, हाँ, इसका सर्वाधिक नुकसान दक्षिण के गरीब विकासशील देशों को अवश्य उठाना पड़ रहा है।

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

पर्यावरणीय आपदाएँ किसी देश या गोलार्द्ध की सीमाओं में नहीं बँधती हैं। बीते दशक के दौरान दुनिया के अलग–अलग हिस्सों में टूटी प्राकृतिक आपदाओं ने साफ–साफ ऐलान कर दिया है कि अब धरती की हालत काफी बिगड़ चुकी है। इन आपदाओं ने स्पष्ट कर दिया है कि पूरी धरती एक विशाल प्राकृतिक प्रणाली है, पर्यावरण के संदर्भ में भौगोलिक सीमाएँ कोई अर्थ नहीं रखती, महीन तारों में बुने इस कुदरती जाल में छेड़छाड़ कहीं भी की जाय असर पूरी दुनिया पर पड़ेगा।

पश्चिमी देश और उनके लोग अधिक सुविधा सम्पन्न जीवन एवं ऐशोआराम की जिंदगी जीने के लिए संघर्ष कर रहे हैं, उनके लिए पर्यावरण विनाश और अनिश्चित भविष्य चिंता से परे है, भावी पीढ़ियों के लिए प्रकृति को एक धरोहर मानना ही उनके लिए नागवार है। दूसरी ओर आधुनिक संचार के साधनों, पाश्चात्य मीडिया व चलचित्रों के प्रभाव के फलस्वरूप गरीब विकासशील देशों की एक बड़ी संख्या भी पर्यावरणीय दुष्परिणामों की चिंता किये बिना पाश्चात्य उपभोक्तावादी जीवन शैली की ओर मुखरित हो रही है। जो उन्हें और भी गहरे कीचड़ और गहरी आर्थिक तथा पर्यावरण मूलक समस्याओं की ओर ले जायेगा। यह हमारी पश्चिमी विकास मॉडल के प्रति विवेकहीन भूख है, जैसा कि गाँधी ने **हिन्द स्वराज** (1909) में बहुत पहले भविष्यवाणी की थी, हमें अभी भी अपने विलम्ब संदेहों से निपटने की आवश्यकता है, हम अभी तक इस मूलभूत प्रश्न का उत्तर नहीं ढूँढ़ पाये हैं। अतः जबकि आज राज्य वैधानिक पर्यावरण मूलक संरक्षण को स्वीकार करने को तैयार दिख रहें हैं, तब भी इस मानव जाति की आम चिंता के रूप में, वे अब तक एक समुदाय का निर्माण नहीं कर सके, जो अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और न्याय की भावना से इस लक्ष्य को पाने का प्रयत्न करे। राज्य अब भी आम संरक्षण और पर्यावरण एवं उपचार का प्रयत्न करें, जो हमारे वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लाभ के लिए हमारी आम प्राकृतिक परंपरा को संरक्षण तथा उसे व्यवहार में लाता है, से काफी दूर हैं।

जलवायु के बदलते स्वरूप ने विकास दर की आड़ लेकर संयम बरतने से बच रहे देशों को भी अब बंधन स्वीकारने के लिए मजबूर जरूर कर दिया है। मामला चाहे वातावरण में अकेले एक चौथाई कार्बन डाई ऑक्साइड उगलने वाले चीन व अमेरिका का हो या फिर विकास का स्वाद चख चुकी भारत, ब्राजील व द0 अफ्रीका जैसी तेज रफ्तार वाली अर्थव्यवस्थाओं का, सभी इस बात को स्वीकारने लगे हैं कि जलवायु परिवर्तन की चुनौती से निपटने के लिए साझे प्रयासों की जरूरत है, किन्तु साझा कोशिशों की बातों के साथ–साथ जिम्मेदारी का बोझ एक दूसरे के कंधो पर डालने के प्रयास भी जारी हैं।

निष्कर्ष

जलवायु परिवर्तन की समस्या कम होने का नाम नहीं ले रही है। क्योंकि इस बात का अहसास जब तक हुआ काफी देर हो चुकी थी। अब इसका गंभीर असर दिखने लगा है। प्रकृति के रौद्र रूप की विभीषिका तमाम देश झेल रहे हैं। इस विनाशलीला के वास्तविक कारण प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन की समस्या से

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

निपटने के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जलवायु परिवर्तन वित्तीयन की व्यवस्था अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर की गई, पर यह व्यवस्था इसलिए अपेक्षित रूप से कारगर नहीं हो पा रही है, क्योंकि समस्या पर सभी देश एकमत भले हों, पर इससे निपटने में उनकी कोई विशेष रूचि नहीं दिखती है। वजह साफ है रोकथाम से होले वाला आर्थिक नुकसान। चूँकि अब समस्या को देखकर शुतुरमुर्गी अंदाज में रेत में मुंह छिपाने से समस्या टल नहीं जायेगी, इसलिए राष्ट्रीय स्तर पर तमाम देशों ने प्रयास करने शुरू कर दिये। अतः अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भले ही बाध्यकारी कानून नहीं बन पा रहे हैं, पर वैश्विक समुदाय से जुड़े रहने के लिए तमाम ऐसी मानक शर्तें सामने सिर उठा कर खडी हो रही हैं, जिनसे बचकर निकलना मुश्किल होता जा रहा है। इसलिए राष्ट्रीय स्तर पर उठाये जा रहे कदम प्रभावी साबित हो रहे हैं। बहरहाल, भले ही अभी जलवायु परिवर्तन की समस्या से निपटने के उपाय अपेक्षित परिणाम नहीं दे पा रहे हों, पर जैसे–जैसे पर्यावरण संरक्षण का मुद्दा जोर पकड़ रहा है, वह सकारात्मक संकेत देने के लिए पर्याप्त है कि आने वाले वर्षों में किये जा रहे प्रयास अपना रंग दिखाएँ।

जब हम पश्चिमी देशों और उनके लोगों को अत्यधिक सम्पन्न जीवन के लिए संघर्ष करते देखते हैं तो पर्यावरण विनाश और निश्चत भविष्य की चिंता हमें काफी परेशानी में डाल देती है तथा यह चिंता और भी बड़ी तब हो जाती है जब हम दक्षिण के गरीब व निम्न अर्थव्यवस्था वाले देशों को उनकी जीवन शैली व विकास मॉडल का आँख मूँदकर अनुसरण करते हुए पाते हैं। यह अंधानुकरण उन्हें गहरे कीचड़ और गहरी आर्थिक तथा पर्यावरणमूलक समस्याओं की ओर ले जायेगा। यह हमारी पश्चिमी विकास मॉडल के प्रति गहरी भूख है, जैसा गाँधी ने **'हिन्द स्वराज'** (1909) में कहा था, ''हमें अभी भी अपने विलम्ब संदेहों से निपटने की आवश्यकता है। हम अभी तक इस मूलभूत प्रश्न का उत्तर नही ढूँढ़ पाये हैं। अतः जबकि आज राज्य वैधानिक पर्यावरण मूलक संरक्षण को स्वीकार करने को तैयार दिख रहे हैं, तब भी इस मानव जाति की आम चिंता के रूप में वे अब तक एक समुदाय का निर्माण नही कर सके जो अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और न्याय की भावना से इन लक्ष्यों को पाने हेतु पहलकदमी करे। राज्य अब भी आम संरक्षण और पर्यावरण एवं उपचार की पहलकदमी, जो हमारे वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लाभ लिए हमारी आम प्राकृतिक परम्परा को संरक्षण तथा उसे प्रशासन में लाता हैं, से काफी दूर हैं।'' विकसित औद्योगिक देशों को यू.एन. एफ.सी.सी.सी. के 'सामान्य किन्तु विभेदीकृत जिम्मेदारी' को स्वीकार करना चाहिए किन्तु वे सभी राष्ट्रों की समान जिम्मेदारी के पक्षधर हैं तथा अपनी आर्थिक विकास प्रभावित होने की डर से संघर्ष समाधान की जिम्मेदारी लेने से कतरा रहे हैं तथा राष्ट्रहित व विकास का बहाना बनाकर पर्यावरण का विनाश कर रहे हैं। अच्छा होता कि 'ये दिल माँगे मोर' के जीवन दर्शन से निकलकर हम 'हैव द केक एण्ड ईट इट टू' के जीवन दर्शन में विश्वास करते, जिसमें हम भौतिक पर्यावरण का आनन्द भी उठाते और वह संरक्षित भी

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

रहता। तद्नुसार समय रहते सावधानी बरतना ही मानव समाज के हित में है। दुनिया के विभिन्न कोनों में बरप रहीं भीषण पर्यावरणीय घटनायें हमें एक नयी जीवन शैली की ओर सोचने को मजबूर कर रही हैं। अब समय आ गया है कि हम अपनी आवश्यकताओं को सीमित करें, दूसरों के समक्ष अपनी सम्पन्नता और हैसियत सिद्ध करने की लालसा से स्वयं को मुक्त करें।

संदर्भग्रन्थ सूची

1. Kjellen, B. 2007, "A new diplomacy for sustainable development: the challenge of global change", London: Routledge, pp.208
2. Sachs, J. 2014, "Sustainable Development Goals for a new Era", Horizons (01),pp.107-119
3. UNFCCC website: http://unfccc.int/2860.php (Accessed on May 20, 2016)
4. CSE website: http://cseindia.org/content/cli-matechange (Accessed on April 18, 2016)
5. http://en.wikipedia.org/wiki/United_Nations_Framework_Convention_on_Climate_Change (Accessed on may 20, 2016).
6. Mukund, Govind Ranjan, "Global Environmental Politics," Oxford University Press, 1997, pp.1-2.
7. Economic and Political Weakly (EPW), April 19, 2010,Vol.XLVI, No.15, pp.115-16.
8. The Times of India, December 2, 2011.
9. The Times of India, December 6, 2011.
10. The Times of India, December 12, 2011.
11. Joint Statement Issued at the conclusion of the 13 BASIC Ministerial Meeting on Climate Change, Beijing, China 19-20 November 2012.
12. See website unfccc.int/ key-seps/doha-climate-gateway/items/7309.php (Accessed on June 04, 2016).
13. See website unfccc.int/meeting/warsaw-nov-2013/meeting/7649.php (Accessed on June 04, 2016).

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

14. World Focus, No.38, May 2015, pp.82-88.
15. World Focus, Vol.363, March 2010, pp.97-102.
16. Yojana, Ministry of Information and Broadcasting, Govt. of India, No.12, December 2015, pp.21-24.
17. UN (2015): Sustainable Development Goals, United Nations See website http://www.un.org/sustainabledevelopment/sustainable-development-goals/ (Accessed on August 15, 2015).
18. World Commission on Environment and Development (WCED) (1987), Our Common Future: Report of the world commission on Environment and Development, WCED, Switzerland, See website http://www.un-documents.net/our-common-future.pdf.
19. The Hindu, New Delhi, April 19, 2013.
20. The Hindu (2013), Developing World's firm 'No' to market based mechanism, November 12, 2013.
21. The Hindu (2013), Cabinet Clears Climate Negotiation Strategy, November 8, 2013.
22. The Hindu (2013), India Sticks to its guns: No Phasing out of Refrigerant Gasses, October 24, 2013.
23. IPCC (2014), Climate Change 2014 Synthesis Report 5th Assessment Report. Available at : http://www.ipcc.ch/ (Accessed on June 10, 2016).
24. Kyoto Protocol (1997), Kyoto Protocol to UNFCCC, P-02, Available at: http://unfccc.int/docs/convkp/kpeng.html.
25. MNRE (2015), Ministry of new and Renewable Energy, Govt. of India. Available at: http://www.mnre.gov.in/
26. PMO (2009), "The Road to Copenhagen: India's Position on Climate Change," Available at: www.pmindia.in/climate%20change_16.03.9.p

ISSN (P): 0976-3635, (e):2454-3411
ICRJIFR
IMPACT FACTOR
4.0000

27. UNEP (2015), "India's Leadership role in Upcoming Climate Change Negotiations highlighted during UNEP Energy meeting with India's minister of Environment," Available at: http://www.unep.org/newscentre/default.aspx?DocumentsID=2818&ArticleID=11133.
28. India, Ministry of Environment and Forest, Annual Report, 2012-13, pp.349.
29. Robert T. Watson, "Climate Change: The Political Situation," Accessed on www.sciencemag.org, Ssience, Vol.302, Decembe 12,2003,pp.1925.
30. R. Ramchandran, "Hurdles Ahead," Frontline, February 20,2015,pp.12.
31. Upadhyay, V. (2004): National Environmental Policy 2004, Economic &b Political Weakly (EPW), September 25, 2004, Mumbai, pp- 4306-4308.
32. Joshi, V. K. (2003): For Poison in the Water, Down to Earth, September 30, 2003, pp-56.
33. Frontline, December 16, 2011, pp-103-104
34. The Hindu, New Delhi, April 2, 2007.
35. Gunther, Bachler, "Conflict and cooperation in the light of Global Human—Ecological Transformation" ENCOP, Occasional paper 09, October 1993, pp-05.
36. Stephen Libiszewski, "What is an Environmental Conflict?" ENCOP, Occasional paper no.01, July 1992, pp-06.